ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 140-143**

ISSN NO.- 2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.- 2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

गुरु की महिमा का एक विमर्शात्मकाऽध्ययन

डॉ0 जनार्दन झा

अस्सिटेंट प्रोफेसर– संस्कृत विभाग, राजकीय महिला महाविद्यालय सलेमपुर–देवरिया (उ0प्र0) भारत

Received-26.01.2023, Revised-31.01.2023, Accepted-06.02.2023 **E-mail: drjanardanjha@gmail.com**

सारांशः ***यदि हम संस्कृत वाङ्मय में किसी शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में बताते हैं, तो महर्षि पाणिनि को ही प्राथमिकता देते हैं, क्यों कि तीनों मुनियों में महर्षि पाणिनि का स्थान सर्वोपरि है। महर्षि पाणिनि ने अनेक धातुओं का उपदेश किया है, जिससे 'गुरु' शब्द की निष्पत्ति होती है।***

भ्वादिगणीय 'गृ सेचने'[1] धातु से 'गुरु' शब्द सम्पादित होता है।

कुंजीभूत शब्द– संस्कृत वाङ्मय, भ्वादिगणीय, कर्णयोर्ज्ञिनामृतमिति, श्रवणेन्द्रिय, ज्ञानामृत, तुदादिगण, विदलयति।

'गरति सिञ्चति कर्णयोर्ज्ञिनामृतमिति गुरुः' अर्थात् शिष्य के श्रवणेन्द्रिय में ज्ञानामृत का सिञ्चन करता है, वह 'गुरु' कहलाता है। अन्य तुदादिगण की 'गृ निगरणे'[2] धातु से 'गुरु' शब्द की सिद्धि होने पर– 'गिरति विदलयति अज्ञानान्धकारमिति गुरुः' व्युत्पत्ति होती है, जिसका अर्थ है– अपने अमृतोपम वचनों से शिष्य के अज्ञान रूपी अन्धकार को विनष्ट करने वाला। 'गुरु' की अत्यधिक स्पष्ट परिभाषा 'गुरुगीता' में दी गयी है–

'गुशब्दस्त्वन्धकारे स्याद् रुशब्दस्तन्निरोधके।
अन्धकारनिरोधित्वाद् गुरुरित्यभिधीयते।।[3]

अर्थात् 'गु' शब्द अन्धकार का और 'रु' शब्द अंधकार निरोध का वाचक है। अज्ञान रूपी अन्धकार को जो विनष्ट करता है, वह गुरु कहलाता है।

नीतिसार के अनुसार गुरु की निष्पत्ति–

दीक्षादाताऽध्यापयिता कृताचार्यादिवाचनः
दोषच्छेदी कृतान्तार्थो गुरुरित्यभिधीयते।।[4]

अर्थात् दीक्षा देने वाला, अध्यापन करने वाला, वाचन करने वाला,दोष को नष्ट करने वाला और कृतार्थ पुरुष गुरु कहलाता है।

तन्त्रसार के अनुसार गुरु की निष्पत्ति–

गकारः सिद्धिदः प्रोक्तः रेफः पापस्य हारकः।
उकारो विष्णुरव्यक्तस्त्रितयात्मा गुरुपरः।।५

अर्थात् 'ग' अक्षर सिद्धिदायक कहलाता है। 'र' पापहारक और सर्वसमर्थ हो, वह गुरु है।

गृणन्ति सद्भूतं शास्त्रार्थमिति गुरवः।[6]

अर्थात् जो यथार्थ शास्त्रों का उपदेश देते हैं, वे गुरु कहलाते हैं।

'गुरु' शब्द के अर्थ व परिभाषा विविध शास्त्रों में विशद् रूप से दिये गये हैं। 'गुरु' शब्द का सामान्य अर्थ महान्, भारी, श्रेष्ठ इत्यादि भी होता है। परन्तु शास्त्रों के आधार पर 'गुरु' का जो विवेचन किया गया है वह पूज्य है। शास्त्रों के द्वारा हमें विधिवत् ज्ञान किसी भी विषय में प्राप्त होता है। इस प्रकार शास्त्रों के द्वारा परिभाषित अथवा बताये गये अर्थ अकाट्य व प्रमाणस्वरूप होते हैं। इसी क्रम में महाभारतकार महर्षि वेदव्यास ने गुरु को भयंकर संसार–सागर का एकमात्र समर्थ सन्तारक कहा है–

न विना ज्ञानविज्ञानेन मोक्षस्याधिगमो भवेत्।
न विना गुरुसम्बन्धं ज्ञानस्याधिगमः स्मृतः।
गुरुः प्लावयिता तस्य ज्ञानं प्लव इहोच्यते।
विज्ञाय कृतकृत्यस्तु तीर्णस्तदुभयं त्यजेत्।।[7]

जिस प्रकार ज्ञान–विज्ञान के बिना मोक्ष संभव नहीं है, वैसे ही सद्गुरु से संबंध हुए बिना ज्ञान प्राप्ति असंभव है। गुरु इस संसार सागर से पार उतारने वाले हैं, उनका दिया हुआ ज्ञान नौका के समान बताया है। व्यक्ति उस ज्ञान को प्राप्त कर भवसागर से पार और कृतार्थ हो जाता है, उसके पश्चात् उसे नौका व नाविक दोनों की अपेक्षा नहीं ह्रोती है। 'गुरु' शब्द को सामान्यतः 'ज्ञानदाता' के रूप में प्रसिद्धि मिली हुई है। वैसे तो 'गुरु' अज्ञानता को नष्ट करने वाला होता है, परन्तु गुरु, आचार्य, उपाध्याय इत्यादि क्या एक ही नाम है? इस विषय में तनिक विचार प्रकट करना चाहिए।

आचार्य– 'आचार्य' वह है, जों शिष्य का यज्ञोपवीत संस्कार कर उसे उपनिषद्, साहित्य एवं शास्त्रसहित वेदों का

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

अध्यापन कराता है। आचार्य आचारं गृह्यति।[८] जिसके द्वारा शिष्य को आचरण की शिक्षा दी जाय, वही आचार्य है।

उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद्द्विजः।
संकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते।।[९]

उपाध्याय– जो ब्राह्मण वेद के एकदेश (मंत्र और ब्राह्मण) एवं वेदांगों को जीविका के लिए पढ़ाता है, वह उपाध्याय कहलाता है।

एकदेशं तु वेदस्य वेदांगान्यपि वा पुनः।
योऽध्यापयति वृत्त्यर्थमुपाध्यायःस उच्यते।।[१०]

प्रवक्ता– प्रोक्त (शाखाग्रन्थ, ब्राह्मण तथा श्रौतसूत्र) साहित्य की शिक्षा देने वाला प्रवक्ता अथवा आख्याता कहा जाता है।

अध्यापक– वैज्ञानिक व लौकिक साहित्य का ज्ञान कराने वाला व्यक्ति अध्यापक कहलाता है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुरु का स्वरूप एक ही रहा है। गुरु वही है, जो पढाये अथवा कुछ भी जानकारी किसी भी विषय में दे।

वैसे तो 'गुरु' एक ऐसा शब्द है, जो अपने में परिपूर्ण असीम शक्ति से युक्त है, गरिमामय है। गुरु का स्वरूप तो साक्षात् मनुष्य के रूप में ईश्वर का स्वरूप है। कितने महान् से महान् ऋषि, मुनि और महात्मा जन गुरु के विषय में बहुत कुछ लिखे, कहे, क्या अब भी कुछ अवशेष रह गया है? नहीं, परन्तु समय के बीतने के साथ–साथ लोगों की सोच में भी परिवर्तन होना स्वाभाविक है, इसलिए ऐसे में अपना भी कुछ विचार प्रकट करना अपने को कृतार्थ करने का एकमात्र बहाना है।

अब उन्हीं सन्तों, ऋषियों और मुनियों की वाणी को पुनरावृत्ति करते हुए अपने मूल बिंदु पर आता हूं। किसी सन्त ने सम्यक् कहा है कि 'गुरु जी का चरण अनेक पापों को नष्ट करने वाला है, ऐसे पवित्र चरन की धूल में लोटकर कोई भी व्यक्ति अपने को कृतार्थ बना सकता है'। प्राचीन काल से लेकर आज के भौतिक और अर्थवादी युग में भी गुरु का महत्त्व किञ्चित् भी न घटकर ज्यों का त्यों बना हुआ है, क्या यह बात विडम्बना से युक्त नहीं है? गुरु सेवा तो साक्षात् प्रभु सेवा है। गुरु की महिमा का बखान शिष्यों के अन्तर्मन को पवित्र कर गुरु भक्ति से सिंचन कर देता है। इसलिए अगर ऐसे महान् देवस्वरूप गुरु का गान हम करते हैं, तो निःसंदेह ही हम अपने को धन्य करते हैं।

साधनाएं अगणित हैं। मत एवं पंथ भी अनेक हैं परन्तु गुरु भक्तों के लिए यही एक मंत्र है– अपने गुरुदेव का नाम। उनका एक ही कर्म है, अपने गुरुदेव की सेवा। उनमें हमेशा एक ही भाव निहित रहता है– गुरुदेव के प्रति समर्पण का भाव। इस नीरस जगत् में गुरु के अतिरिक्त कौन ऐसा मार्गदर्शक है, जो तत्त्व का साक्षात्कार कराए अथवा कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर सके? इस क्षणभंगुर और नश्वर जीवन में सत्यात्मक और तथ्यात्मक कुछ भी नहीं है। यह जगत् केवल मोह–माया का जाल है, जहां पर चारों ओर स्वार्थपरता का भाव नजर आता है। एक गुरु के अलावे शेष सभी स्वार्थ के मित्र और अवसरवादी है। गुरु भक्ति की साधना–महिमा को परिपुष्ट करते हुए देवाधिदेव भगवान् शंकर जगद्धात्री पार्वती से कहते हैं–

यत्पादरेणुकणिका कापि संसारवारिधेः।
सेतुबंधायते नाथं देशिकं तमुपास्महे।।
यस्मादनुग्रहं लब्ध्वा महदज्ञानमुत्सृजेत्।
तस्मै श्रीदेशिकेन्द्राय नमश्चाभीष्टसिद्धये।।

गुरु की कृपा को समुद्घाटित करने वाले इन श्लोकों में अनेक गूढ़ बातें समाहित हैं। इन अनुभूतियों को गुरु भक्तों की भावचेतना में सम्प्रेषित करते हुए शिवशंकर जी के वचन हैं,

"गुरु की चरणधूलि का एक छोटा सा कण सेतुबंध के समान है, जिसके आश्रय होकर महाभवसागर कोई सरलोपायेन पार किया जा सकता है, उन गुरु की उपासना मैं करूंगा", ऐसा भाव प्रत्येक शिष्य को रखना चाहिए। जिनकी कृपा दृष्टि से महानज्ञान विनष्ट हो जाता है। गुरु सर्वाभीष्ट सिद्धि प्रदान करते हैं। उनके प्रति नतमस्तक होना शिष्य का परम कर्तव्य है। हिन्दी साहित्य के महान् कवि कबीरदास जी का सारा ग्रंथ गुरु महिमा से ही मण्डित है। बोधसागर जैसी रचनाओं में अत्यंत सुनदरतापूर्वक अपने भाव को कवि के द्वारा व्यक्त किया गया है। गुरु को भगवान् रूप मानकर उनकी शरणागत होने के लिए कहते हैं–

गुरु ईश्वर गुरु परब्रह्म,सतगुरु सबका देव।
गुरु बिनु पार न आवई,ताते शरणों लेव।
गुरु सेवा बिनु न जुटे,भव जल को संताप।
गुरु सेवा करि गुरु मुढा,काटे सबही पाप।।
गुरु चरणोदक अनन्त फल हमते कही न जाय।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

मन की पुरवै कामना,जो लेवे चित्त लगाय।।
काल जाल से छूटिकै,मोक्ष मिलन की चाह।
सत्यमिलन की युक्ति सब, गुरु बतावे राह।।
दया होय गुरुदेव की,छूटे अविद्या भान।
मिथ्या माया सब मिटै,पावे अविचल ज्ञान।।"

गुरु की महिमा अपरम्पार है, गुरु की नाव पर बैठ कर कोई भी भक्त भवसागर पार हो सकता है। गुरु बन्धनों से हमें छुटकारा दिला सकता है। गुरु सर्वदा शिष्य को आश्रय देता है। अगर सद्गुरु का आशीर्वाद हो तो कोई उसका अहित नहीं कर सकता है। गुरु की प्रसन्नता से शिष्य का मनोबल बढ़ जाता है। गुरु की कृपा से शिष्य क्लिष्ट कार्य भी करने में समर्थ हो जाता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि आखिर सद्गुरु कौन है? इसका उत्तर यह है कि जो व्यक्ति के प्रत्यक्ष और परोक्ष सभी आयामों के मर्मज्ञ होते हैं। मानवीय चेतना की सम्पूर्णता का गुरु को विशेष अनुभव होता है। हमारे भविष्य के विषय में गुरु को पारदर्शी ज्ञान होता है। मन की विचारशैली, शिष्य की मानवीय दुर्बलता और अज्ञानता से विशेष परिचित होते हैं। गुरु शिष्य की समस्याओं समाधान भी यथाशीघ्र खोज निकालते हैं। ऐसे सद्गुरु बड़े ही सौभाग्यशाली को प्राप्त होते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी गुरु की महिमा का वर्णन मनमोहक रूप से किया है–

बन्दऊं गुरुपद कंज, कृपा सिंधु नर रूप हरि।
महा मोह तम पुंज जासु वचन रविकर निकर।।
श्री गुरु पद नख मनि गन ज्योती।
सुमित दिव्य दृष्टि हिय होती।।"

श्रीराम की गुरु की सेवा के प्रति मनमोहक वर्णन इस प्रकार है–

मुनिवर सयन कीन्हि तब जाई।
लगे चरन चापन दोउ भाई।।
तेइ दोउ बन्धु प्रेम जनु जीते।
गुरु पद कमल पलोटत प्रीते।।
बार–बार मुनि अग्या दीन्हीं।
रघुवर जाइ सयन तब कीन्हीं।।"

श्री रामचन्द्र जी, जो मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, जगत् के संरक्षक हैं, अत्यंत दयालु हैं, स्वयं शक्ति से परिपूर्ण हैं, गुरु के प्रति अपार भक्ति और गुरु सेवा में कितने आसक्त हैं कि बार–बार गुरुदेव ने शयन करने के लिए कहा, तब उसके बाद श्रीराम प्रभु ने शयन किया। धन्य है भगवान् श्रीराम का यह सेवाभाव, गुरु के प्रति प्रेम व गुरु में सच्ची आस्था।

अगर आधुनिक समय में भी किंचित्मात्र भी गुरुभक्ति शिष्यों में आ जाय, साथ ही गुरुदेव का भी आशीर्वाद शिष्यों को प्राप्त होता रहे तो कितनी अच्छी बात होगी? संत तुलसीदास जी के इन सुवचनों के साथ ही प्रसिद्ध दार्शनिक और चिंतक आदि शंकराचार्य जी के मतों का उल्लेख गुरु के विषय में करना चाहूंगा, जिससे गुरु की महिमा और चारुता से पूर्ण हो सके–

शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्रं,
यशश्चारुचित्तं धनं मेरुतुल्यम्।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरङ्घ्रिपद्मे,
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्।।"

कहने का भाव यह है कि अगर शरीर सुंदर हो,। यश, कीर्ति चारों दिशाओं में फैली हुई हो, सुमेरु पर्वत के समान अपार धन होय, परन्तु गुरु के श्रीचरणों में मन लगा ही न हो, तो इन सभी चीजों से क्या फायदा? जगद्गुरु शंकराचार्य जी के 'गुर्वष्टकम्' में संगृहीत यह गुरु की महिमा से युक्त पद्य यथार्थ में सत्यभूत गुरु भक्ति का ज्ञान कराता है। जगत् में जो भी महापुरुष हुए हैं, वे किसी न किसी रूप में गुरु के ऋणी हैं। गुरु के बिना यथार्थ ज्ञान और यथार्थ सुख प्राप्त करना असम्भव है। 'गुरु' ही दुनिया में साक्षात् परब्रह्म परमेश्वर है, जिनके समक्ष और कोई नहीं ठहर सकता है।

राष्टाध्यक्ष भी गुरु के समक्ष नतमस्तक होकर गुरु के श्रीचरणों में साष्टांग दंडवत प्रणाम कर उनका आशीर्वाद प्राप्त कर अपने को कृतार्थ मानता है।

गुरु के बिना ज्ञान हो सकता है? कभी नहीं। कोई व्यक्ति गुरु से जब द्रोह, ईर्ष्या करता है, तब क्या होता है, इसका उत्तर गोस्वामी तुलसीदास जी देते हैं–

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

जे सठ गुरु सन इरिषा करहीं।
रौरव नरक कोटि जुग परहीं।।
हरि गुरु निन्दक दादुर होई।
पावे जनम सहस तन सोई।।

इसलिए प्रत्येक शिष्य और व्यक्ति की आस्था गुरु में होनी चाहिए, तभी गुरुदेव की कृपा होती है। गुरु के बिना इस संसार सागर से पार पाना दुष्कर कार्य है। अतः गुरु ही सर्वोपरि है, इसमें कोई संदेह नहीं है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी लिखा है–

बिनु गुरु होइ कि ज्ञान, ग्यान कि होइ विराग बिनु।
गावहिं वेद पुरान सुख कि लहहि हरि भगति बिनु।।"

गुरु के बिना यथार्थ ज्ञान सर्वथा असंभव है, अतः निस्वार्थ भाव से गुरु की सेवा करना ही मानव का परम धर्म है। इसलिए–

"गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः"।।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

१. वै०सि०कौ०,भ्वा०प्र०
२. वै०सि०कौ०,तुदा०प्र०
३. गुरु–गीता,
४. नीतिसार,
५. तन्त्रसार,
६. योगशास्त्र,
७. महाभारत,शा०प०,
८. निरुक्त,
९. मनुस्मृति,
१०. तथैव,
११. बोधसागर,
१२. श्रीरामचरितमानस,बा०का०,
१३. तथैव
१४. गुर्वष्टकम्,
१५. श्रीरामचरितमानस,उ०का०,८९

*****